IJAER/ July-August 2022/Volume-11/Issue-4 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

हिंदी कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श

डॉक्टर लोकेश कुमार शर्मा

एसोसिएट प्रोफेसर

हिंदी साहित्य राजकीय महाविद्यालय टोंक

सार

साहित्य एक ऐसा माध्यम है जो समाज की आवश्यकताओं, समस्याओं, और सोच को प्रकट करने का एक महत्वपूर्ण तरीका होता है। साहित्य के माध्यम से लेखक अपने विचारों, दृष्टिकोणों, और विचारधाराओं को पढ़ने वाले लोगों तक पहुंचा सकते हैं। इसके अलावा, साहित्य के माध्यम से समाज में चल रहे सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तनों का भी परिचय हो सकता है। हिंदी कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण विषय है जो समाज में महिलाओं की स्थिति, समस्याएँ, और उनके जीवन के अनुभवों को उजागर करने में मदद करता है। कहानी साहित्य के माध्यम से लेखक अक्सर महिलाओं के जीवन की विविध पहलुओं को प्रस्तुत करते हैं, जैसे कि उनके सम्बंध, संघर्ष, और स्वतंत्रता की लड़ाई। इस विमर्श में, हम विभिन्न हिंदी कहानियों के माध्यम से महिलाओं के चरित्र, उनके विचार, और उनके सामाजिक परिपेक्ष्य को जांचेंगे और उनके माध्यम से समाज में स्त्री की भूमिका के बारे में विचार करेंगे। हम यह भी देखेंगे कि कैसे कहानी साहित्य महिलाओं के विचारों और अहम प्रश्नों को उजागर करने का माध्यम बन सकता है और समाज में सामाजिक परिवर्तन को प्रोत्साहित कर सकता है। इस अवलोकन के माध्यम से हम स्त्री विमर्श के महत्व को समझेंगे और हिंदी कहानी साहित्य में स्त्री के चित्रण की गहरी विश्लेषण करेंगे, जिससे हमारे समाज के सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितिकरण के प्रति हमारी समझ और दृष्टिकोण को विकसित किया जा सकता है।

प्रस्तावना

हिन्दी कथा साहित्य में स्त्री विमर्श जिसमें नारी जीवन की अनेक समस्याएं देखने को मिलता है। हिन्दी साहित्य में छायावाद काल से स्त्री - विमर्श का जन्म माना जाता है। महादेवी वर्मा की श्रृंखला की कड़िया नारी सशक्तिकरण का सुन्दर उदाहरण है। प्रेमचंद से लेकर आज तक अनेक पुरूष लेखकों ने स्त्री समस्या को अपना विषय बनाया लेकिन उस रूप् में नहीं लिखा जिस रूप् में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लिखी है। अतः स्त्री - विमर्श की शुरूआती गुंज पश्चिम में देखने को मिला। सन् 1960 ई . के आस - पास नारी सशक्तिकरण जोर पकड़ी जिसमें चार नाम चर्चित हैं। उषा प्रियम्वदा , कृष्णा सोबती , मन्नू भण्डारी एवं शिवानी आदि लेखिकाओं ने नारी मन की अन्तद्र्वन्द्वों एवं आप बीती घटनाओं को उकरेना शुरू किए और आज स्त्री - विमर्श एक ज्वलंत मुद्दा है। आठवें दशक तक आते - आते यही विषय एक आन्दोलन का रूप ले लिया जो शुरूआती स्त्री - विमर्श से ज्यादा शक्तिशाली सिद्ध हुआ। आज मैत्रेयी पुष्पा तक आते - आते महिला लेखिकाओं की बाढ़ सी आ गयी जो पितृसत्ता समाज को झकझोर दिया। नारी मुक्ति की गुंज अब देह मुक्ति के रूप में परिलक्षित होने लगा।

समाजिक सरोकारों से लैस बुद्धिजीवियों और कार्यकर्ताओं के बीच लंबे समय से यह लगातार चर्चा और चिंता का विषय रहा है कि हिंदी में स्त्री प्रश्न पर मौलिक लेखन आज भी काफी कम मात्रा में मौजूद है। स्त्री विमर्श की सैद्धांतिक अवधारणाओं एवं साहित्य में प्रचलित स्त्री विमर्श की प्रस्थापनाओं की भिन्नता या एकांगीपन के संदर्भ में पहला प्रश्न यह उठता है कि हिंदी साहित्य जगत में स्त्री विमर्श के मायने क्या हैं ? साहित्य , जिसे कथा , कहानी , आलोचना , कविता इत्यादि मानवीय संवेदनाओं की वाहक विधा के रूप में देखा जाता है वह दलित , स्त्री , अल्पसंख्यक तथा अन्य हाशिए के विमर्शों को किस रूप में चित्रित करता है ? साहित्य अपने यर्थाथवादी होने के दावे के बावजूद क्या स्त्री विमर्श की मूल अवधारणाओं को रेखांकित कर उस पर आम जन के बीच किसी किस्म की संवेदना को विकसित कर पाने में सफल हो पाया है ?

स्त्री के प्रश्न हाशिए के नहीं बल्कि जीवन के केंद्रीय प्रश्न हैं। किंतु हिंदी साहित्य की मुख्यधारा जिसे वर्चस्वशाली पुरुष लेखन भी कहा जा सकता है , में स्त्री प्रश्नों अथवा स्त्री मुद्दों की लगातार उपेक्षा की जाती रही है। इसका अर्थ यह नहीं है कि स्त्री अथवा स्त्री प्रश्न सिरे से

गायब हैं बल्कि यह है कि स्त्री की उपस्थिति या तो यौन वस्तु (Sexual object) के रूप में है या यदि वह संघर्ष भी कर रही हैं तो उसका संघर्ष बहुत हद तक पितृसत्तात्मक मनोसंरचना अख्तियार किए होता है संघर्ष करने वाली स्त्री की निर्मिति ही पितृसत्तात्मक होती है। साहित्य की पितृसत्तात्मक परंपरा में लगातार स्त्री प्रश्नों का हास होता क्यों दिख रहा है ? क्या स्त्री विमर्श को देह केंद्रित विमर्श के समकक्ष रखकर स्त्री - विमर्श चलाने के दायित्वों का निर्वाह किया जा सकता है ? यदि साहित्य का कोई सामाजिक दायित्व है तो हिंदी साहित्य में स्त्री विमर्श के नाम पर स्त्री देह को बेचने व स्त्री को सेक्सुअल आब्जेक्ट अथवा मार्केट के उत्पाद के रूप में तब्दील कर दिए जाने की जो पूँजीवादी पितृसत्तात्मक बाजारवादी रणनीति काम कर रही है उस मानसिकता से यह मुक्त क्यों नहीं है ? उसको पहचान कर उसके सक्रिय प्रतिरोध से ही वास्तविक स्त्री विमर्श संभव है। क्यों सत्तर के दशक में नवसामाजिक आंदोलन के रूप में समतामूलक समाज निर्माण के स्वप्न को लेकर उभरे स्त्रीवादी आंदोलनों की चेतना एवं उनके मुद्दों को जाने - अनजाने नजरअंदाज करने का प्रयास किया जा रहा है ?

साहित्य में महिला लेखन के रूप में उपलब्ध विभिन्न कहानियों , कविताओं तथा आत्मकथाओं में स्त्री की दैहिक पीड़ा से परे जाकर उसकी वर्गीय , जातीय एवं लैंगिक पीड़ा का वास्तविक स्वरूप प्रतिबिंबित क्यों नहीं हो पा रहा है ? स्त्री साहित्य के सवालों के मूल्यांकन के संदर्भ में भी हिंदी आलोचना में गैर - अकादमिक एवं उपेक्षापूर्ण रवैया क्यों मौजूद है। साठ के दशक में पुरुष वर्चस्ववाद की सामाजिक सत्ता और संस्कृति के विरुद्ध उठ खड़े हुए स्त्रियों के प्रबल आंदोलन को नारीवादी आंदोलन का नाम दिया गया। वस्तुतः नारीवादी आंदोलन एक राजनीतिक आंदोलन है जो स्त्री की सामाजिक , आर्थिक , राजनैतिक एंव दैहिक स्वतंत्रता का पक्षधर है। स्त्री मुक्ति अकेले स्त्री की मुक्ति का प्रश्न नहीं है बल्कि यह संपूर्ण मानवता की मुक्ति की अनिवार्य शर्त है। दरअसल यह अस्मिता की लड़ाई है। इतिहास ने यह साबित भी किया है कि आधी आबादी की शिरकत के बगैर क्रांतियाँ सफल नहीं हो सकतीं।

भारतीय राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौर में अपनी जातीय अस्मिता की पहचान और जनता के अधिकारों के माँग के साथ - साथ स्त्री मुक्ति का स्वप्न भी देखा जा रहा था। नव स्वतंत्र भारतीय राष्ट्र ने महिला आंदोलनों को यह विश्वास भी दिलाया था कि बड़े उद्देश्यों की प्राप्ति के पश्चात स्त्री - पुरुष संबंध , लैंगिक श्रम विभाजन , आर्थिक हिंसा जैसे मुद्दे स्वतः ही हल हो जाएँगे परंतु स्वतंत्रता के इतने वर्षो के बाद भी स्त्री - मूलक प्रश्न ज्यों के त्यों बने हुए हैं। औरत पर आर्थिक , सामाजिक यौन उत्पीड़न अपेक्षतया अधिक गहरे , व्यापक , निरंकुश और संगठित रूप से कायम है। स्त्री आंदोलनों को इन समस्त चुनौतियों से लड़कर ही अपनी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करना होगा। निश्चित रूप से इसका स्वरूप अन्य मुक्तिकामी आंदोलनों से किसी रूप में भिन्न नहीं है जो वर्गीय , जातीय , नस्लीय आधार पर समाज हो रही हिंसा एवं असमानता के प्रति संघर्षरत है तथा एक समतामूलक समाज निर्माण हेतु प्रतिबद्ध हैं। स्त्रीवादी आंदोलनों की शैक्षणिक रणनीति के रूप में स्त्री अध्ययन एक अकादमिक अभिप्रयास है जो मानवता एवं जेंडर संवेदनशील समाज में विश्वास करता है। यह समाज के प्रत्येक तबके के अनुभवों को केंद्र में रखकर ज्ञान के प्रति नया दृष्टिकोण विकसित करने के लिए प्रतिबद्ध है जो सत्तामूलक ज्ञान की रूढ़ सीमाओं को तोड़कर ज्ञान को उसके वृहद् रूप में प्रस्तुत करता है। विशेष तौर पर स्त्री विषयक मुद्दों के सामाजिक , आर्थिक , राजनैतिक एवं सांस्कृतिक पक्षों पर अपनी राय रखते हुए जेंडर समानता आधारित समाज के निर्माण की ओर अग्रसर है। अंतरविषयक अध्ययन होने के कारण यह अन्य विषयों के साथ ज्ञानात्मक संबंध भी कायम करता है। स्त्री प्रश्नों के प्रति अकादमिक जगत में स्पेस बनाने के लिए भी स्त्रीवाद को पढ़ाया जाना अति आवश्यक है। जरूरी नहीं कि उच्च शिक्षा संस्थानों में स्त्रीवाद पढ़ने के बाद लोग स्त्रीवादी बनें ही परंतु यह संभव हो सकेगा कि ज्ञान के नए क्षितिज के रूप में वह उसके बारे में समझ रखते हों।

आमतौर पर स्त्री विमर्श के अकादमिक होने के उपरांत यह आरोप लगते रहे हैं कि इसके कारण आंदोलनों का संस्थानीकरण हुआ है एवं लोग स्त्री मुद्दों को टेक्स्ट के रूप में पढ़ने लगे हैं। बहुत हद तक यह सही भी है परंतु धीरे धीरे ही सही स्त्री अध्ययन परंपरागत ज्ञान की दुनिया में अपने लिए स्थान बना पाने में सफल हो रहा है। इसे शैक्षिक संस्थाओं के उदारवादी चेहरे के रूप में भी देखा जा सकता है। या यूँ कहें कि यह ब्राह्मणवादी पितृसत्तात्मक ज्ञान व्यवस्था की मजबूरी भी है कि वह इस किस्म ने विमर्शों को तरजीह दे।

हिन्दी साहित्य स्त्री समस्या

हिन्दी साहित्य में स्त्री - विमर्श की शुरूआत छायावाद काल से माना जाता है। महादेवी वर्मा की कविताओं में वेदना का विभिन्न रूप देखने को मिलता है। उसकी श्रृंखला की कड़िया ‘ स्त्री सशक्तिकरण का सुन्दर उदाहरण है। जिसमें नारी - जागरण एवं मुक्ति का सवाल को उठाया गया है। ऐसा साहित्य जिसमें स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं का चित्रण हो स्त्री - विमर्श कहलाता है।

प्रेमचन्द से लेकर राजेन्द्र यादव तक अनेक पुरूष लेखकों ने नारी समस्या को उकेरा है। लेकिन उस रूप में नहीं जिस रूप में स्वयं महिला लेखिकाओं ने लेखनी चलायी है। हिन्दी कथा - साहित्य में नारी - मुक्ति को लेकर स्त्री - विमर्श की गूंज 1960 ई. में पश्चिम में हुआ था । जिसमें चार नाम चर्चित है - उषा प्रियम्वदा, कृष्णा सोबती, मन्नू भण्डारी एवं शिवानी। ये नारी मन के छिपे शक्तियों को पहचाना और नारी की दिशाहीनता, दुविधाग्रस्तता, कुण्ठा आदि का विश्लेषण किया।

हिन्दी पद्य व गद्य में नारी विमर्श

समाज के दो पहलू स्त्री - पुरूष एक दूसरे के पूरक है। किसी एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व नहीं है। उसके बाद भी पुरूष समाज ने महिला समाज को अपने बराबर के समानता से वंचित रखा। यही पक्षपात दृष्टि ने शिक्षित नारियों को आंदोलन करने को मजबूर किया जो आज ज्वलंत मुद्दा नारी - विमर्श के रूप में दृष्टिगोचर है।

आदिकाल से ही नारियों की दशा दयनीय एवं सोचनीय थी। स्त्रियों की दशा को देखकर विवेकानंद कहते है - स्त्रियों की अवस्था को सुधारे बिना जगत के कल्याण की कोई सम्भावना नहीं है। पक्षी के लिए एक पंख से उड़ना सम्भव नहीं है। 1 विवेकानंद जी महिला समाज की वास्तविक दशा से चिंचित, देश एवं समाज के भलाई महिला समाज के तरक्की के बगैर असंभव बताया है।

सुशीला टाकभौरे के काव्य संग्रह स्वातिबूंद और खारे मोती तथा यह तुम भी जानों काफी चर्चित रहे हैं। इनकी विद्रोहणी कविता में आक्रोश की ध्वनि सुनाई पड़ती है –

" मां - बाप ने पैदा किया था गूंगा

परिवेश ने लंगड़ा बना दिया

चलती रही परिपाटी पर

बैसाखियां चरमराती हैं।

अधिक बोझ से अकुलाकर

विस्कारित मन हुंकारता है

बैसाखियों को तोड़ दूं। "2

उपर्युक्त कविता स्त्री - जीवन की वास्तविकता को प्रदर्शित कर रही है।

स्वातंत्रयोत्तर हिन्दी गद्यकार एवं कवि रघुवीर सहायजी नारी जीवन की वास्तविक चित्र खिंचा हैं, उन्होंने अपने काव्य में स्वतंत्रता के बाद स्त्री जीवन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया है। जिस भारत में स्त्री वैदिक काल में " यत्र नार्यस्तु पूज्यंते तत्र रमंते देवता " कहा जाता था आज वही अनेक शोषण का शिकार हो रही है। वह कहता है –

" नारी बेचारी है

पुरूष की मारी

तन से क्षुदित है

लपक कर झपक कर

अंत में चित्त है। "3

प्रस्तुत पंक्ति में कविवर सहाय जी नारी को बेचारी कहकर उसकी दयनीय दशा का वर्णन किया है जो अपने अधिकारों के लिए लड़ नहीं पाती। लेकिन वर्तमान में यह स्थिति परिवर्तित नजर आती है। भारत सरकार ने सन् 2001 को महिलाओं के सशक्तिकरण वर्ष के रूप में घोषित किया। अब नारी अपनी हरेक अधिकार को लेकर रहेगी। यही लड़ाई स्त्री - विमर्श या नारी सशक्तिकरण के रूप में परिलक्षित होती है।

नारी लेखिकाओं का योगदान

हिन्दी कथा साहित्य में नारी विमर्श का जोर आठवें दशक तक आते - आते एक आंदोलन का रूप ले लिया। आठवें दशक के महिला लेखिकाओं में उल्लेखनीय है - ममता कालिया , कृष्णा अग्निहोत्री , चित्रा मुद्गल , मणिक मोहनी , मृदुला गर्ग , मुदुला सिन्हा , मंजुला भगत , मैत्रेयी पुष्पा , मृणाल पाण्डेय , नासिरा शर्मा , दिप्ती खण्डेलवाल , कुसुम अंचल , इंदू जैन , सुनीता जैन , प्रभाखेतान , सुधा अरोड़ा , क्षमा शर्मा , अर्चना वर्मा , नमिता सिंह , अल्का सरावगी , जया जादवानी , मुक्ता रमणिका गुंप्ता आदि ये सभी लेखिकाओं ने नारी मन की गहराईयों , अन्तद्रवन्द्वों तथा अनेक समस्याओं का अंकन संजीदगी से किया है।

स्त्री की दशाओं पर अनेक समाज सुधारकों ने चिन्ता व्यक्त किया और यथा सम्भव दूर करने का प्रयास भी। जिससे नारी की स्थिति में परिवर्तन हुआ। ब्रम्ह समाज , आर्य समाज , थियोसोफिकल सोयायटी , रामकृष्ण मिशन तथा अनेक सरकारी संगठनों ने नारी शिक्षा पर जोर दिया , जिसका सकारात्मक परिणाम आया। वंदना वीथिका के शब्दों में - " नारियों के लिए सबसे बड़ा अभिशाप उनकी अशिक्षा थी और उनकी परतंत्रता का प्रमुख कारण उनकी आर्थिक स्वतंत्रतता का अभाव था। आज स्थिति परिवर्तित हुई है। आज हर क्षेत्र का द्वार लड़कियों के लिए खुला है। वे हर जगह प्रवेश पाने लगी हैं - जमीं से आसमां तक - पृथ्वी से चांद तक (कल्पना चांवला , सुनिता विलियम) उनकी पहुंच है। "4

आज स्त्री समाज सभी क्षेत्रों में अपनी भागीदारी निभा रही है। राजनीतिक हो या सामाजिक , आर्थिक हो या सांस्कृतिक उसके बाद भी यह लड़ाई क्यों ? लेकिन सवाल तो यह है कि वह पुरूष की भांति स्वतंत्रता चाहती है। इसीलिए पितृसत्ता का विरोध कर पारम्परिक बेड़ियों को तोड़ना चाहती है।

बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशक में स्त्रीवादी विचार को पनपने का सुअवसार मिला। भूमण्डलीकरण ने अपने तमाम अच्छाईयों एवं बुराईयों के साथ सभी वर्ग के शिक्षित स्त्रियों को घर से बाहर निकलने का अवसार दिया। परिणामस्वरूप स्त्री अपने वर्जित क्षेत्रों में ठोस दावेदारी की और स्वाललम्बन के दिशा में तीव्र प्रयास भी सामने आए।

स्त्री - विमर्श वस्तुतः स्वाधीनता के बाद की संकल्पना है। स्त्री के प्रति होने वाले शोषण के खिलाफ संघर्ष है। डॉ. संदीप रणभिरकर के शब्दों में - " स्त्री - विमर्श स्त्री के स्वयं की स्थिति के बारे में सोचने और निर्णय करने का विमर्श है। सदियों से होते आए शोषण और दमन के प्रति स्त्री चेतन ने ही स्त्री - विमर्श को जन्म दिया है। "5

पितृसत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्री समाज को हमेशा अंधकारमय जीवन जीने को मजबूर किया है। लेकिन आज की नारी चेतनशील है जिसे अच्छे - बुरे का ज्ञान है। इसीलिए अब इस व्यवस्था का बहिष्कार कर स्वच्छंदात्मक जीवन जीने को आतुर दिखाई पड़ती है। नारी अस्तित्व को लेकर अपने - अपने समय पर कई विद्वानों ने चिन्ता व्यक्त किया है। तुलसीदास जी ने " ढ़ोल गवार , शूद्र , पशु , नारी - सकल ताड़ना के अधिकारी " कहकर नारी को प्रताड़ना के पात्र समझा है तो मैथलीशरण गुप्त जी ने " अबला जीवन हाय तुम्हारी यही कहानी , आंचल में है दूध और आंखों में पानी " कहकर नारी के स्थिति पर चिन्ता व्यक्त किया है। प्रसाद ने " नारी तुम केवल श्रद्धा हो " कहा है तो शेक्सपियर ने " दुर्बलता तुम्हारा नाम ही नारी है " आदि कहकर नारी अस्तित्व को संकीर्ण बताया है।

अब स्थिति कुछ बदली हुई नजर आती है। क्योंकि छठे शताब्दी के पहले तक सिर्फ पुरूष लेखकों का अधिकार था , महिला लेखन को काऊच लेखक कहकर हंसी उड़ाया जाता था। परन्तु अब स्त्री - विमर्श का डंका इसलिए बज रहा है क्योंकि आठवें दशक तक आते - आते महिला लेखिकाओं की बाढ़ सी आ गयी। उसके बाद भी प्रसिद्ध लेखिका सीमोन द बोउआर के उक्त कथन महिला समाज में परिलक्षित होती है - " स्त्री की स्थिति अधीनता की है। स्त्री सदियों से ठगी गई है और यदि उसने कुछ स्वतंत्रता हासिल की है तो बस उतनी ही जितनी पुरूष ने अपनी सुविधा के लिए उसे देनी चाही। यह त्रासदी उस आधे भाग की है , जिसे आधी आबादी कहा जाता है। "6

नारी मुक्ति से जुड़े अनेक प्रश्न , उन प्रश्नों से जुड़ी सामाजिक , पारिवारिक एवं आर्थिक बेबसी और उससे उत्पन्न स्त्री की मनः स्थिति का चित्रण अनेक स्तरों पर हुआ है। " साठ के दशक और उसके संघर्ष का अधिकांश इतिहास जागरूक होती हुई स्त्री का अपना रचा हुआ इतिहास है। नगरों एवं महानगरों में शिक्षित एवं नवचेेतना युक्त स्त्रियों का एक ऐसा वर्ग तैयार हो गया था जो समाज के विविध क्षेत्र में अपनी कार्य क्षमता प्रमाणित करने के लिए उत्सुक था। "7

हिन्दी कथा लेखिकाओं ने अपने - अपने लेखन में नारी मन की अनेक समस्याओं को विषय बनाया है। अमृता प्रीतम के रसीदी टिकट , कृष्णा सोबती - मित्रों मरजानी , मन्नू भण्डारी - आपका बंटी , चित्रा मुद्गल - आबां एवं एक जमीन अपनी , ममता कालिया - बेघर , मृदुला गर्ग - कठ गुलाब , मैत्रेयी पुष्पा - चाक एवं अल्मा कबूतरी , प्रभा खेतान के छिन्नमस्ता , पद्मा सचदेव के अब न बनेगी देहरी , राजीसेठ का तत्सम , मेहरून्निसा परवेज का अकेला पलाश , शशि प्रभा शास्त्री की सीढ़ियां , कुसुम अंचल के अपनी - अपनी यात्रा , शैलेश मटियानी की बावन नदियों का संगम , उषा प्रियम्वदा के पचपन खम्बे , लाल दिवार , दीप्ति खण्डेलवाल के प्रतिध्वनियां आदि में नारी संघर्ष को देखा जा सकता है। डाॅ ज्योति किरण के शब्दों में - " इस समाज में जब स्त्रियां अपनी समझ और काबलियत जाहिर करती हैं तब वह कुलच्छनी मानी जाती हैं , जब वह खुद विवेक से काम करती है तब मर्यादाहीन समझी जाती है। अपनी इच्छाओं , अरमानों के लिए जब वह आत्मविश्वास के साथ लड़ती हैं और गैर समझौतावादी बन जाती है , तब परिवार और समाज के लिए वह चुनौती बन जाती है। "8

ज़रूरी है हिंदी स्त्री विमर्श के नए आयाम की तलाश

हिंदी में स्त्री विमर्श मात्र पूर्वाग्रहों या व्यक्तिगत विश्वासों तक ही सीमित नहीं है | उसके और भी कुछ आयाम हैं और इन आयामों को भी तलाशने की जरूरत हमारे आलोचकों को है न कि सिर्फ चंद नामों के आधार पर एक खास दायरे में बाँधने की | कला साहित्य के हर विचारधारात्मक संघर्ष के पीछे अपने समय और समाज के परिवर्तनों को भी ध्यान में रखना जरुरी है | यहाँ तक कि स्त्री की स्थिति को निर्धारित करने वाले संस्थाओं में आये परिवर्तनों को भी लक्ष्य करना जरुरी है |

जैसे 16 दिसम्बर की घटना के बाद आने वाली वर्मा कमेटी की रिपोर्ट ऐसे ही परिवर्तनों का परिणाम है | जहाँ तक हिंदुस्तान में संस्कृति को बदलने की लड़ाई के शुरू होने की बात है तो वह उसी दिन से शुरू हो गई होगी जिस दिन पहली स्त्री ने अपने अधिकारों की माँग करके वर्चस्वशाली संस्कृति के समक्ष प्रतिरोधात्मक संस्कृति की शुरुआत की होगी | हम नहीं जानते कि वह स्त्री कौन थी या उसकी माँग क्या थी ! हो सकता है उसकी पहली लड़ाई अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को लेकर ही रही हो ! १६ दिसम्बर की घटना के बाद उठने वाला आन्दोलन सांस्कृतिक वर्चस्व के खिलाफ हुए संघर्षो के लम्बे इतिहास का एक बड़ा अध्याय है और इस अध्याय का इस रूप में लिखा जाना तभी संभव हो सका जब उसकी एक मजबूत पृष्ठभूमि निर्मित हो चुकी थी | चाहे मथुरा रेप केस रहा हो या माया त्यागी रेप केस या मनोरमा देवी रेप केस रहा हो , यहाँ के पुरुषवादी सत्ता - विमर्श की विद्रूपता को दिखाने के लिए ऐसे हजारों नाम लिए जा सकते हैं और उनके विरोध में उठने वाले छोटे से छोटे स्वर को भी सांस्कृतिक वर्चस्व का प्रतिरोध माना जाना चाहिए |

उपसंहार

महिला लेखिकाओं की लड़ाई डाॅ जयोति किरण की उपर्युक्त गद्यांश में देखी जा सकती है। अतः निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नारी आदिकाल से ही पीड़ित एवं शोषित रही है पुरूष प्रधान समाज मान मर्यादा के आड़ में सदा उसे दबाकर रखना चाहा। कभी घर का इज्जत कहकर तो कभी देवी कहकर चार दीवारों के अन्दर कैद ही रखा। इन्हीं परम्परागत पित्सत्तात्मक बेड़ियों को लांघने की लड़ाई है स्त्री - विमर्श। साहित्य का मुख्य उद्देश्य समाज के अदृश्य पहलुओं, जीवन के गहराईयों, और मानव अनुभवों को प्रस्तुत करना और विचारों को साझा करना होता है। हिंदी कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण और सजीव भूमिका निभाता है, जिसमें महिलाओं के जीवन, उनकी समस्याएँ, और उनकी चुनौतियों को दर्शाने का प्रयास किया जाता है। हिंदी कहानी साहित्य के माध्यम से, हम देखते हैं कि महिलाओं के चरित्र विवि धता से भरपूर हो सकते हैं - वे न केवल घरेलू और सामाजिक मामलों में अपनी मूल भूमिकाओं के रूप में प्रस्तुत होती हैं, बल्कि उनके अंतरात्मा की गहरी खोज का भी परिचय होता है। स्त्री विमर्श के माध्यम से हम समझ सकते हैं कि महिलाएं अकेले में जीवन के सभी पहलुओं का सामना करती हैं, और उनके अनुभवों में विशेषत: कठिनाइयाँ, सफलताएँ, और संघर्ष शामिल होते हैं। साहित्य के माध्यम से, हम उनके सोचने के तरीकों और समस्याओं को समझ सकते हैं, और इसके माध्यम से हम समाज के स्त्री के साथ सामाजिक समरसता और समाज में उनके योगदान के प्रति समझ और सहमति विकसित कर सकते हैं।इस तरह, हिंदी कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श एक महत्वपूर्ण और आवश्यक घटक है जो समाज की दृष्टि को बदल सकता है और महिलाओं

के समाज में और भी मजबूत स्थान दिला सकता है। स्त्री विमर्श के माध्यम से हमें यह भी दिखाई देता है कि महिलाओं के जीवन में उनके सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक अधिकारों की मांग कितनी महत्वपूर्ण है। यह साहित्य महिलाओं के प्रति समाज की जागरूकता और समरसता को बढ़ावा देने का माध्यम बन सकता है और उन्हें उनकी अधिकारों की रक्षा करने के लिए सजग रहने की भी समझा सकता है। इस निष्कर्ष में, हम कह सकते हैं कि हिंदी कहानी साहित्य में स्त्री विमर्श का महत्व है क्योंकि यह समाज में समाजिक परिवर्तन और सामाजिक समरसता को प्रोत्साहित करने का एक माध्यम है। यह कहानियाँ महिलाओं के जीवन के प्रति हमारी समझ को विस्तारित करती हैं और उनके अनुभवों को मान्यता दिलाने में मदद करती हैं। साथ ही, यह हमें यह भी दिखाती है कि महिलाएं कैसे समाज में अपनी भूमिका को और भी मजबूती से निभा सकती हैं। इसलिए, स्त्री विमर्श हिंदी कहानी साहित्य का महत्वपूर्ण हिस्सा है और यह साहित्य के माध्यम से समाज में समाजिक समरसता और समाज में स्त्री के योगदान को प्रोत्साहित करने का माध्यम बन सकता है।

संदर्भ सूची

1. आजकल : मार्च 2013 - पृष्ठ 20
2. वहीं - पृष्ठ 29
3. पंचशील शोध - समीक्षा - पृष्ठ 82
4. आजकल : मार्च 2013 - पृष्ठ 27
5. पंचशील शोध - समीक्षा - पृष्ठ 87
6. आजकल : मार्च 2013 - पृष्ठ 24
7. आजकल : मार्च 2011 - पृष्ठ 25
8. पंचशील शोध - समीक्षा - पृष्ठ 61
9. दि संडे राष्ट्रीय साप्ताहिक समाचार पत्र दिल्ली, नोएडा, द ेहरादून से प्रकाशित उत्तराखण्ड संस्करण, 2011 लेख-सृजन संसार के अंतर्गत, डॉ अमित शुक्ल, रीवा,मप
10. महिला सशक्तिकरण, भाग 1, संपादक, डॉवीरेन्द्र सिंह यादव, आ ेम ेगा पब्लिकेशन दरियागंज, नई दिल्ली,2010
11. महिला सशक्तीकरण दशा एव ं दिशा,ऽ संपादक-अखिलेश शुक्ला, गायत्री पब्लिकेशन रीवा, पृष्ठ - 519
12. आउटलुक, पाठक साहित्य सर्व े मासिक पत्रिका जनवरी 2011 सफदरजंग, नई दिल्ली
13. स्त्री परम्परा और आधुनिकता- सं0 रजाकिशोर, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली,संस्करण 2004,
14. उत्तर प्रदेश जनवरी, 1998, अपने भीतर का समय- मैत्रेयी, पुष्पा
15. भारतीय नारी, दशा दिशा, आशारानी व्हौरा
16. स्त्रीवादी विमर्श- समाज और साहित्य- क्षमा शर्मा,
17. स्त्री उपेक्षिता- सीमोन द वोउवा, प्रस्तुति डॉ0 प्रभा खेतान, संस्करण-2002, हिन्द पाकेट बुक्स, प्रा0लि0 नई दिल्ली।

18. मिलकर मांगेगे तो आकाश मिलेगा- पद्मजा शर्मा, प्रसंग पत्रिका, अंक 16 संस्मरण अंक, सम्पादक शम्भु बादल
19. कविता का कहानीपन, अनामिका वागर्थ, मार्च 2006, सं0 रवीन्द्र कालिया
20. स्त्री विमर्श और सामाजिक आन्दोलन- डॉ0 राजनारायण